IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

दृश्य-संस्कृति के दौर में हिंदी व्यंग्य : परसाई से मीम तक

डॉ. पुरोबी अविनाश
असिस्टेंट प्रोफेसर
दयानंद सागर कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय
कुमारस्वामी लेआउट,बैंगलोर-560111, भारत

सारांश: इक्कीसवीं सदी का समाज डिजिटल संचार, सोशल मीडिया और दृश्य-संस्कृति के तीव्र विस्तार का साक्षी है। इंटरनेट आधारित मंचों ने न केवल संचार की प्रकृति को परिवर्तित किया है, बल्कि अभिव्यक्ति के स्वरूप को भी पुनर्परिभाषित किया है। इस परिवर्तित सांस्कृतिक परिदृश्य में 'मीम' एक महत्वपूर्ण डिजिटल अभिव्यक्ति के रूप में उभरा है। मीम केवल हास्य या मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आलोचना की एक प्रभावशाली दृश्य भाषा है। दूसरी ओर हिंदी व्यंग्य साहित्य की परंपरा सदैव समाज की विसंगतियों, सत्ता-संरचनाओं और मानवीय पाखंडों पर प्रहार करती रही है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी तथा श्रीलाल शुक्ल जैसे रचनाकारों ने व्यंग्य को सामाजिक चेतना और प्रतिरोध का सशक्त माध्यम बनाया।
इस आलेख का उद्देश्य हिंदी व्यंग्य साहित्य और समकालीन मीम संस्कृति के अंतर्संबंधों का अध्ययन करना है। आलेख में यह प्रतिपादित किया गया है कि मीम संस्कृति हिंदी व्यंग्य का प्रतिस्थापन नहीं, बल्कि उसका डिजिटल विस्तार है। परसाई से लेकर समकालीन मीम तक व्यंग्य का मूल स्वर सामाजिक आलोचना और प्रतिरोध का रहा है, किंतु डिजिटल दृश्य-संस्कृति ने उसकी भाषा, शिल्प, प्रसार और ग्रहणशीलता को नए रूप में परिवर्तित किया है। आलेख में व्यंग्य की साहित्यिक परंपरा, दृश्य-संस्कृति की अवधारणा, मीम के उदय, डिजिटल जनसहभागिता तथा मीम संस्कृति की सीमाओं का आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

कुंजी शब्द - हिंदी व्यंग्य, मीम संस्कृति, दृश्य-संस्कृति, सोशल मीडिया, डिजिटल मानविकी, हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल.

प्रस्तावना

मनुष्य मूलतः एक संप्रेषणशील प्राणी है और उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम समय के साथ निरंतर बदलते रहे हैं। मौखिक परंपरा से लेकर मुद्रित साहित्य और फिर डिजिटल मीडिया तक संचार के साधनों में हुए परिवर्तन ने विचारों, संवेदनाओं और सामाजिक अनुभवों की अभिव्यक्ति को नई दिशाएँ प्रदान की हैं। वर्तमान समय को यदि 'दृश्य-संस्कृति का युग' कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज चित्र, वीडियो, इमोजी, रील और मीम जैसे दृश्य माध्यम संचार की प्रक्रिया में केंद्रीय भूमिका निभा रहे हैं। सोशल मीडिया ने इस परिवर्तन को और अधिक तीव्र बना दिया है।

डिजिटल युग में सूचना की गति अभूतपूर्व हो गई है। व्यक्ति के पास समय सीमित है और सूचना की मात्रा अत्यधिक। परिणामस्वरूप संक्षिप्त, दृश्यात्मक और त्वरित अभिव्यक्ति के रूप लोकप्रिय हुए हैं। 'मीम' इसी सांस्कृतिक परिवर्तन का उत्पाद है। सामान्यतः किसी चित्र, दृश्य, फिल्मी संवाद, लोकप्रिय सांस्कृतिक प्रतीक या डिजिटल संदर्भ के माध्यम से निर्मित व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति को मीम कहा जाता है। इसकी विशेषता यह है कि यह कुछ ही क्षणों में जटिल सामाजिक या राजनीतिक परिस्थितियों पर टिप्पणी कर सकता है। यद्यपि मीम संस्कृति आधुनिक डिजिटल युग की देन प्रतीत होती है, किंतु इसकी मूल प्रवृत्ति नई नहीं है। समाज की विसंगतियों, राजनीतिक विडंबनाओं और मानवीय कमजोरियों पर व्यंग्य करना मानव सभ्यता की प्राचीन प्रवृत्ति रही है। हिंदी साहित्य में भी व्यंग्य एक सशक्त और गंभीर विधा के रूप में विकसित हुआ है। भारतेंदु युग से लेकर आधुनिक काल तक व्यंग्य

ने सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का कार्य किया है। विशेष रूप से हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल ने हिंदी व्यंग्य को केवल हास्य का माध्यम न रहने देकर सामाजिक आलोचना का प्रभावी उपकरण बनाया। हरिशंकर परसाई की रचनाओं में व्यवस्था की विसंगतियों, राजनीतिक अवसरवाद, सामाजिक पाखंड और मध्यवर्गीय मानसिकता का तीखा चित्रण मिलता है। परसाई का व्यंग्य पाठक को हँसाने के साथ-साथ उसे आत्ममंथन के लिए भी विवश करता है। इसी प्रकार शरद जोशी ने आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को सहज भाषा में प्रस्तुत किया, जबकि श्रीलाल शुक्ल ने 'राग दरबारी' में भारतीय लोकतंत्र और प्रशासनिक तंत्र की विफलताओं पर तीखा व्यंग्य किया।

समकालीन डिजिटल संस्कृति में मीम भी लगभग इसी भूमिका का निर्वहन करते दिखाई देते हैं। वे राजनीतिक नेताओं, सरकारी नीतियों, सामाजिक घटनाओं, शिक्षा व्यवस्था, बेरोजगारी, महँगाई और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों पर त्वरित प्रतिक्रिया प्रस्तुत करते हैं। अंतर केवल इतना है कि जहाँ साहित्यिक व्यंग्य शब्दों और कथानक के माध्यम से अपना प्रभाव उत्पन्न करता है, वहीं मीम दृश्य संकेतों और संक्षिप्त भाषा के माध्यम से कार्य करता है। यहाँ कई महत्वपूर्ण प्रश्न हमारे समक्ष उत्पन्न होता है-

- क्या मीम संस्कृति हिंदी व्यंग्य की नई अभिव्यक्ति है, अथवा वह केवल क्षणिक मनोरंजन का साधन है?
- क्या डिजिटल दृश्य-संस्कृति ने व्यंग्य की शक्ति को विस्तृत किया है या उसकी वैचारिक गहराई को सीमित कर दिया है?
- क्या मीम सामाजिक प्रतिरोध का नया माध्यम हैं या वे केवल वायरल संस्कृति का हिस्सा भर हैं?

प्रस्तुत आलेख इन्हीं प्रश्नों की आलोचनात्मक पड़ताल करता है। यह अध्ययन इस धारणा पर आधारित है कि हिंदी व्यंग्य का मूल स्वर समय के साथ बदला नहीं है; बदला है उसका माध्यम, शिल्प और प्रस्तुति का स्वरूप। परसाई के लेखों से लेकर सोशल मीडिया के मीम तक व्यंग्य की यात्रा वस्तुतः भारतीय समाज में अभिव्यक्ति के बदलते रूपों की यात्रा है। इसलिए मीम संस्कृति को केवल डिजिटल मनोरंजन के रूप में नहीं, बल्कि हिंदी व्यंग्य की समकालीन अभिव्यक्ति के रूप में समझना आवश्यक है। हिंदी व्यंग्य साहित्य पर पर्याप्त शोध कार्य उपलब्ध हैं तथा दृश्य-संस्कृति और मीम अध्ययन भी वैश्विक अकादमिक विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बन चुके हैं। किंतु हिंदी व्यंग्य की परंपरा और समकालीन डिजिटल मीम संस्कृति के अंतर्संबंधों का समग्र एवं तुलनात्मक अध्ययन अपेक्षाकृत कम दिखाई देता है। अधिकांश अध्ययन या तो साहित्यिक व्यंग्य तक सीमित हैं अथवा डिजिटल संस्कृति के सामान्य विश्लेषण तक। प्रस्तुत आलेख इसी शोध-अंतराल की पूर्ति का प्रयास करता है तथा यह प्रतिपादित करता है कि समकालीन मीम संस्कृति हिंदी व्यंग्य की परंपरा का डिजिटल विस्तार है, जिसके माध्यम से सामाजिक आलोचना और प्रतिरोध की परंपरा नए रूप में अभिव्यक्त हो रही है।

हिंदी व्यंग्य की परंपरा : सामाजिक आलोचना की साहित्यिक धारा

व्यंग्य साहित्य की वह सशक्त विधा है जो समाज में व्याप्त विसंगतियों, अंतर्विरोधों, पाखंडों तथा सत्ता-समर्थित विकृतियों का उद्घाटन करती है। यह केवल हास्य का सृजन नहीं करती, अपितु सामाजिक यथार्थ की गहन पड़ताल करते हुए मनुष्य और व्यवस्था के मध्य उपस्थित तनावों को उजागर करती है। वस्तुतः व्यंग्य साहित्य का वह आलोचनात्मक स्वर है जो समाज को आत्मावलोकन के लिए बाध्य करता है तथा उसकी जड़ताओं पर प्रहार करता है। हिंदी साहित्य में व्यंग्य की परंपरा सामाजिक चेतना, प्रतिरोध और जनपक्षधरता की परंपरा रही है, जिसने समय-समय पर समाज को उसकी वास्तविकताओं से परिचित कराने का कार्य किया है। आधुनिक हिंदी साहित्य में व्यंग्य का सुविकसित रूप स्वतंत्रोत्तर काल में विशेष रूप से दिखाई देता है। यद्यपि इसके बीज भारतेंदु युग में ही दृष्टिगोचर होने लगते हैं, तथापि स्वतंत्र भारत की राजनीतिक, सामाजिक और प्रशासनिक परिस्थितियों ने व्यंग्य को एक नई वैचारिक ऊर्जा प्रदान की। लोकतांत्रिक आदर्शों और सामाजिक यथार्थ के बीच बढ़ती खाई, भ्रष्टाचार, अवसरवादिता, नौकरशाही की जड़ता तथा नैतिक मूल्यों के क्षरण ने व्यंग्यकारों को गहन चिंतन और सृजन की प्रेरणा दी। फलस्वरूप हिंदी व्यंग्य केवल मनोरंजन का माध्यम न रहकर सामाजिक आलोचना और वैचारिक प्रतिरोध का प्रभावशाली उपकरण बन गया।

आधुनिक हिंदी व्यंग्य के शिखर पुरुष के रूप में हरिशंकर परसाई का नाम सर्वप्रथम स्मरणीय है। उन्होंने व्यंग्य को हास्य की सीमाओं से मुक्त कर सामाजिक हस्तक्षेप और वैचारिक प्रतिरोध की सशक्त अभिव्यक्ति बनाया। उनकी रचनाओं में व्यवस्था की विडंबनाएँ, धार्मिक आडंबर, राजनीतिक अवसरवाद, मध्यवर्गीय मानसिकता और सामाजिक पाखंड तीक्ष्ण आलोचनात्मक दृष्टि के साथ उपस्थित होते हैं। परसाई का व्यंग्य पाठक को केवल हँसाता नहीं, बल्कि उसकी चेतना को झकझोरता है। उनके यहाँ व्यंग्य एक नैतिक हस्तक्षेप है, जो समाज के मुखौटों को हटाकर उसके वास्तविक चेहरे को सामने लाता है। शरद जोशी ने हिंदी व्यंग्य को सहजता, संप्रेषणीयता और भाषिक चातुर्य का नया आयाम प्रदान किया। उन्होंने सामान्य जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं में छिपी बड़ी सामाजिक विडंबनाओं को अत्यंत सरल किंतु प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया। उनके व्यंग्य में हास्य के साथ-

साथ गहरी सामाजिक संवेदना और मानवीय अंतर्दृष्टि विद्यमान है। दूसरी ओर, श्रीलाल शुक्ल ने 'राग दरबारी' जैसी कालजयी कृति के माध्यम से स्वतंत्रोत्तर भारतीय समाज की संरचनात्मक विकृतियों का ऐसा यथार्थपरक चित्र प्रस्तुत किया, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक प्रतीत होता है। उनके यहाँ व्यंग्य केवल व्यक्ति की आलोचना नहीं, बल्कि संपूर्ण सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था की समीक्षा बन जाता है। इनके अतिरिक्त रवीन्द्रनाथ त्यागी, काका हाथरसी, मनोहर श्याम जोशी, कन्हैयालाल नंदन, लतीफ़ घोंघी, ज्ञान चतुर्वेदी, के.पी. सक्सेना, गोपाल चतुर्वेदी, सुदर्शन मजीठिया, नरन्द्र कोहली, बाशेंदु कुमार, प्रेम जनमेजय, हरीश नवल, आलोक पुराणिक, सुभाष चंदर, अनूप शुक्ल, अविनाश वाचस्पति, पंकज चतुर्वेदी जी के साथ-साथ महिला व्यंग्यकारों में सूर्यबाला, सुधा अरोड़ा, इला कुमार जैसे मंझे हुए रचनाकारों ने हिंदी व्यंग्य को विषय, भाषा और शिल्प की दृष्टि से समृद्ध किया। इन लेखकों ने अपने-अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चुनौतियों को व्यंग्य का विषय बनाते हुए बदलते भारतीय समाज का बहुआयामी चित्र प्रस्तुत किया। उनके लेखन में सत्ता और समाज के अंतर्विरोध, उपभोक्तावादी संस्कृति की विसंगतियाँ, मीडिया का प्रभाव, बाजारवाद की प्रवृत्तियाँ तथा मानवीय मूल्यों का क्षरण गहन आलोचनात्मक दृष्टि के साथ अभिव्यक्त हुआ है।

वस्तुतः हिंदी व्यंग्य की सबसे बड़ी शक्ति उसकी आलोचनात्मक चेतना और प्रतिरोधधर्मिता में निहित है। व्यंग्य यथास्थिति का समर्थक नहीं, बल्कि परिवर्तन का प्रेरक होता है। वह सत्ता से प्रश्न करता है, सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देता है और मनुष्य को अपने समय के प्रति सजग बनाता है। इसीलिए हरिशंकर परसाई का यह कथन आज भी सार्थक प्रतीत होता है कि "व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार कराता है और जीवन की आलोचना करता है।" यह कथन हिंदी व्यंग्य की समूची वैचारिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। समय के साथ अभिव्यक्ति के माध्यम बदलते रहे हैं, किंतु व्यंग्य की मूल चेतना निरंतर बनी रही है। जो व्यंग्य कभी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं और सार्वजनिक मंचों के माध्यम से समाज तक पहुँचता था, वही आज डिजिटल तकनीक और सोशल मीडिया के सहारे नए रूपों में अभिव्यक्त हो रहा है। ब्लॉग, वेब-पत्रिकाएँ, यूट्यूब, फेसबुक, इंस्टाग्राम और अन्य डिजिटल मंचों ने व्यंग्य को अभिव्यक्ति के नए आयाम प्रदान किए हैं। परिणामस्वरूप व्यंग्य अब केवल साहित्यिक जगत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि जनसंचार और जनभागीदारी का सक्रिय माध्यम बन गया है।

यहीं से हिंदी व्यंग्य की परंपरा और समकालीन मीम संस्कृति के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु निर्मित होता है। यदि परंपरागत व्यंग्य शब्दों, रूपकों और कथात्मक संरचनाओं के माध्यम से सामाजिक यथार्थ का उद्घाटन करता था, तो आज का मीम दृश्य संकेतों, प्रतीकों और डिजिटल भाषा के माध्यम से वही कार्य संपन्न करता है। माध्यम बदल गया है, किंतु विसंगतियों की पहचान, सत्ता की आलोचना और सामाजिक चेतना का मूल उद्देश्य आज भी अपरिवर्तित है। इस दृष्टि से मीम संस्कृति को हिंदी व्यंग्य की परंपरा से पृथक न मानकर उसकी समकालीन डिजिटल अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए। परसाई से मीम तक की यह यात्रा वस्तुतः व्यंग्य की समाप्ति नहीं, बल्कि उसके निरंतर रूपांतरण, विस्तार और पुनर्सृजन की यात्रा है, जो हिंदी व्यंग्य की जीवंतता और उसकी सतत प्रासंगिकता का प्रमाण प्रस्तुत करती है।

डिजिटल मानविकी और हिंदी व्यंग्य

इक्कीसवीं सदी में डिजिटल प्रौद्योगिकी ने मानव जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। साहित्य, संस्कृति, भाषा और ज्ञान के पारंपरिक स्वरूप भी इस परिवर्तन से अछूते नहीं रहे हैं। इसी परिवर्तित बौद्धिक परिदृश्य में 'डिजिटल मानविकी' (Digital Humanities) एक महत्त्वपूर्ण अंतःविषयक अध्ययन क्षेत्र के रूप में उभरी है। यह क्षेत्र साहित्य, इतिहास, संस्कृति, कला और समाज के अध्ययन में डिजिटल तकनीकों के उपयोग पर बल देता है तथा पारंपरिक मानविकी विषयों को नए दृष्टिकोण से समझने का अवसर प्रदान करता है। डिजिटल मानविकी का मूल उद्देश्य केवल साहित्य को डिजिटल रूप में उपलब्ध कराना नहीं है, बल्कि यह भी देखना है कि डिजिटल माध्यम ज्ञान, अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक अनुभवों की संरचना को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं।

हिंदी साहित्य के संदर्भ में डिजिटल मानविकी का महत्व निरंतर बढ़ता जा रहा है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, डिजिटल अभिलेखागार, ई-पुस्तकें, ऑनलाइन पत्रिकाएँ, ब्लॉग, पॉडकास्ट और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित मंचों ने साहित्य के सृजन, प्रसार और ग्रहण की प्रक्रिया को व्यापक रूप से परिवर्तित किया है। जो साहित्य कभी पुस्तकालयों और मुद्रित ग्रंथों तक सीमित था, वह आज डिजिटल माध्यमों के द्वारा वैश्विक पाठक समुदाय तक पहुँच रहा है। परिणामस्वरूप साहित्य और पाठक के बीच का संबंध अधिक गतिशील, सहभागी और अंतःक्रियात्मक बन गया है।

हिंदी व्यंग्य के संदर्भ में यह परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। व्यंग्य सदैव अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विसंगतियों की पहचान करने वाली विधा रहा है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल जैसे रचनाकारों ने अपने समय के यथार्थ को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त किया, किंतु डिजिटल युग में यही आलोचनात्मक चेतना नए माध्यमों में रूपांतरित होती दिखाई देती है। आज ब्लॉग, वेब-पत्रिकाएँ, सोशल मीडिया पोस्ट, स्टैंड-अप कॉमेडी, व्यंग्यात्मक वीडियो और मीम संस्कृति हिंदी व्यंग्य की नई अभिव्यक्तियों के रूप में उभर रही हैं। इस प्रकार व्यंग्य का क्षेत्र केवल साहित्यिक पाठ तक सीमित न रहकर डिजिटल सार्वजनिक क्षेत्र (Digital Public Sphere) का सक्रिय अंग बन गया है। डिजिटल मानविकी का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि वह साहित्य को केवल लिखित शब्दों तक सीमित नहीं मानती। समकालीन सांस्कृतिक अध्ययन में चित्र, ध्वनि, वीडियो, डिजिटल प्रतीक, इमोजी तथा मीम जैसे माध्यम भी अर्थ निर्माण की प्रक्रियाओं में समान रूप से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो मीम केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि एक 'डिजिटल पाठ' (Digital Text) है, जिसके भीतर सामाजिक अनुभव, सांस्कृतिक स्मृतियाँ, राजनीतिक प्रतिक्रियाएँ और जनभावनाएँ निहित होती हैं। जिस प्रकार साहित्यिक व्यंग्य अपने समय की आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार मीम भी समकालीन समाज की विडंबनाओं और अंतर्विरोधों को दृश्यात्मक रूप में अभिव्यक्त करते हैं।

वर्तमान समय में डिजिटल मंचों ने व्यंग्य के लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया को भी गति प्रदान की है। जहाँ परंपरागत साहित्यिक जगत में रचनाकार और पाठक के बीच एक निश्चित दूरी विद्यमान थी, वहीं डिजिटल माध्यमों ने प्रत्येक नागरिक को संभावित सर्जक बना दिया है। अब सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए किसी औपचारिक प्रकाशन की आवश्यकता नहीं रह गई है। एक सामान्य इंटरनेट उपयोगकर्ता भी मीम, पोस्ट या डिजिटल व्यंग्य के माध्यम से सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा बन सकता है। इस प्रकार डिजिटल मानविकी अभिव्यक्ति की लोकतांत्रिक संभावनाओं को विस्तृत करती है और साहित्य को जनभागीदारी के नए आयाम प्रदान करती है। भविष्य की दृष्टि से डिजिटल मानविकी हिंदी व्यंग्य के अध्ययन के लिए नई संभावनाओं का द्वार खोलती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, बिग डेटा, दृश्य विश्लेषण, डिजिटल अभिलेखन और सोशल मीडिया अध्ययन जैसे उपकरणों के माध्यम से यह समझा जा सकता है कि समकालीन समाज में व्यंग्य किस प्रकार निर्मित, प्रसारित और ग्रहण किया जा रहा है। इसलिए हिंदी व्यंग्य और मीम संस्कृति का अध्ययन केवल साहित्यिक अध्ययन का विषय नहीं रह जाता, बल्कि वह डिजिटल मानविकी, सांस्कृतिक अध्ययन, मीडिया अध्ययन और संचार अध्ययन के अंतःविषयक विमर्श का भी महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाता है। इस अर्थ में डिजिटल मानविकी हिंदी व्यंग्य की परंपरा को नए संदर्भ, नई व्याख्याएँ और नए शोध आयाम प्रदान करती है।

दृश्य-संस्कृति और मीम का उदय

वर्तमान युग को यदि दृश्य-संस्कृति का युग कहा जाए तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज का मनुष्य शब्दों की अपेक्षा चित्रों, प्रतीकों और दृश्य संकेतों के माध्यम से अधिक संवाद स्थापित कर रहा है। डिजिटल तकनीक, इंटरनेट और सोशल मीडिया के व्यापक प्रसार ने संचार की प्रकृति को गहराई से प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप दृश्य सामग्री केवल सूचना का माध्यम नहीं रही, बल्कि अर्थ-निर्माण और सामाजिक विमर्श का महत्वपूर्ण उपकरण बन गई है। जॉन बर्जर ने अपनी प्रसिद्ध कृति Ways of Seeing में संकेत किया है कि देखने का ढंग ही अर्थ को निर्धारित करता है, जबकि निकोलस मिर्जोएफ के अनुसार दृश्य-संस्कृति आधुनिक समाज की चेतना और अनुभवों के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाती है। इसी दृश्य-संस्कृति की उपज के रूप में मीम संस्कृति का उदय हुआ है, जिसने अभिव्यक्ति को एक नया रूप प्रदान किया है।

'मेम' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम रिचर्ड डॉकिन्स ने अपनी पुस्तक The Selfish Gene (1976) में किया था। उन्होंने इसे सांस्कृतिक विचारों और व्यवहारों के प्रसार की इकाई के रूप में परिभाषित किया। यद्यपि डॉकिन्स की अवधारणा जैव सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ी थी, किंतु इंटरनेट युग में इस शब्द ने एक नया अर्थ ग्रहण कर लिया। 1990 के दशक में इंटरनेट के विस्तार के साथ डिजिटल मीम संस्कृति का प्रारंभ हुआ। 1996 में प्रसारित 'Dancing Baby' को विश्व के प्रारंभिक इंटरनेट मीमों में गिना जाता है। इसके बाद सोशल मीडिया मंचों के विकास ने मीमों को वैश्विक पहचान प्रदान की। धीरे-धीरे मीम केवल हास्य का साधन न रहकर सामाजिक यथार्थ, राजनीतिक परिस्थितियों और सांस्कृतिक विडंबनाओं की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गया।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में मीम संस्कृति का विकास इंटरनेट और स्मार्टफोन क्रांति के साथ जुड़ा हुआ है। विशेष रूप से 2010 के बाद तथा सस्ती डेटा सेवाओं के प्रसार के पश्चात सोशल मीडिया का दायरा अभूतपूर्व रूप से विस्तृत हुआ। इसके साथ ही मीम संस्कृति भी शहरी सीमाओं से निकलकर व्यापक जनसमुदाय तक पहुँच गई। प्रारंभिक दौर में जहाँ मीम मुख्यतः अंग्रेज़ी भाषा तक सीमित थे, वहीं बाद में हिंदी सहित भारतीय भाषाओं ने इस क्षेत्र में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई। फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सऐप और यूट्यूब जैसे मंचों पर हिंदी मीमों की लोकप्रियता

ने व्यंग्य और हास्य को नई जनभाषा प्रदान की। बॉलीवुड संवाद, क्रिकेट, चुनावी राजनीति, प्रतियोगी परीक्षाएँ, बेरोज़गारी, महँगाई और दैनिक जीवन की जटिलताएँ हिंदी मीमों के प्रमुख विषय बनकर उभरीं। जैसे सोशल मीडिया पर प्रचलित मीम— "ज़िंदगी तो सेट थी, फिर रिज़ल्ट आ गया" अथवा "सरकारी नौकरी की तैयारी करते-करते उम्र निकल गई"— युवा वर्ग की मनःस्थिति को हास्य और व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करते हैं। ऐसे मीम केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ के दृश्य-पाठ भी हैं।
मीम की सबसे बड़ी विशेषता उसकी तात्कालिकता और संप्रेषणीयता है। वह कुछ शब्दों, एक चित्र और सांस्कृतिक संकेतों के माध्यम से जटिल सामाजिक यथार्थ को सहज रूप में व्यक्त कर देता है। यही कारण है कि समकालीन सांस्कृतिक अध्ययन में मीम को केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि अपने समय की सामूहिक चेतना का दर्पण माना जाने लगा है। वह जनमानस की प्रतिक्रियाओं, आकांक्षाओं, असंतोष और प्रतिरोध को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मीम संस्कृति आधुनिक दृश्य-संस्कृति की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिसने व्यंग्य को नई भाषा, नया शिल्प और नई सामाजिक पहुँच प्रदान की है।

परसाई से मीम तक : व्यंग्य की बदलती भाषा और शिल्प

साहित्य समाज का दर्पण कहा जाता है, किंतु व्यंग्य उस दर्पण का वह रूप है जो समाज को उसका वास्तविक चेहरा दिखाने का साहस रखता है। हिंदी व्यंग्य साहित्य की परंपरा इसी साहस और सामाजिक चेतना की परंपरा रही है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल जैसे अन्य कई रचनाकारों ने भी व्यंग्य को मात्र हास्य का साधन न रहने देकर उसे सामाजिक प्रतिरोध और वैचारिक हस्तक्षेप का सशक्त माध्यम बनाया। उनके यहाँ व्यंग्य व्यवस्था की विसंगतियों, राजनीतिक अवसरवाद, सामाजिक पाखंड और मानवीय दुर्बलताओं का उद्घाटन करता है। परसाई का व्यंग्य पाठक को केवल हँसाता नहीं, बल्कि उसकी चेतना को झकझोरता है; शरद जोशी आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को सहज भाषा में उद्घाटित करते हैं, जबकि श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था की विफलताओं का जीवंत दस्तावेज़ बनकर सामने आता है।
समकालीन डिजिटल युग में व्यंग्य की यह परंपरा एक नए रूप में दिखाई देती है। सोशल मीडिया और दृश्य-संस्कृति के प्रसार ने व्यंग्य को शब्दों की सीमाओं से बाहर निकालकर चित्रों, प्रतीकों और दृश्य संकेतों की दुनिया में प्रवेश कराया है। यदि परंपरागत व्यंग्य विचारोत्तेजक निबंध, कहानी या उपन्यास के रूप में सामने आता था, तो आज वही व्यंग्य मीम के रूप में कुछ शब्दों और एक चित्र के सहारे अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है। इस परिवर्तन ने व्यंग्य की भाषा, शिल्प और संप्रेषणीयता को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। उदाहरणार्थ, प्रतियोगी परीक्षाओं में बार-बार तिथि परिवर्तन अथवा भर्ती प्रक्रियाओं में विलंब से संबंधित मीमों में प्रायः लोकप्रिय फिल्मी संवादों का प्रयोग करते हुए युवाओं की निराशा को व्यंग्यात्मक रूप में व्यक्त किया जाता है। इसी प्रकार महँगाई, बेरोजगारी अथवा चुनावी वादों पर आधारित मीम सामाजिक असंतोष को दृश्य भाषा में अभिव्यक्त करते हैं। ये उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि समकालीन मीम संस्कृति भी उसी आलोचनात्मक चेतना को आगे बढ़ाती है, जिसे हिंदी व्यंग्य साहित्य लंबे समय से व्यक्त करता आया है।
परंपरागत हिंदी व्यंग्य में भाषा का सौष्ठव, व्यंजना, संकेत और कथात्मक विस्तार महत्वपूर्ण थे। व्यंग्यकार अपने कथ्य को क्रमशः विकसित करता था और पाठक को चिंतन की प्रक्रिया में सहभागी बनाता था। इसके विपरीत मीम संस्कृति तात्कालिकता की संस्कृति है। यहाँ अर्थ का निर्माण शब्दों से अधिक दृश्य संकेतों, लोकप्रिय सांस्कृतिक संदर्भों और सामूहिक अनुभवों के आधार पर होता है। एक प्रसिद्ध फिल्मी संवाद, किसी राजनेता की तस्वीर या किसी लोकप्रिय दृश्य का पुनर्संयोजन तत्काल व्यंग्यात्मक अर्थ उत्पन्न कर देता है। इस प्रकार मीम आधुनिक समय की दृश्य-भाषा का व्यंग्यात्मक रूप है। यह परिवर्तन केवल अभिव्यक्ति की तकनीक का नहीं, बल्कि पाठक और रचनाकार के संबंधों का भी है। साहित्यिक व्यंग्य में लेखक और पाठक के बीच एक निश्चित दूरी होती थी, जबकि मीम संस्कृति में प्रत्येक उपभोक्ता संभावित रूप से निर्माता भी है। अब व्यंग्य किसी एक लेखक की बौद्धिक संपत्ति न रहकर सामूहिक सृजन का रूप ग्रहण कर चुका है। यह परिवर्तन व्यंग्य के लोकतंत्रीकरण का संकेत देता है, जहाँ सामान्य नागरिक भी सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं पर अपनी आलोचनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकता है। फिर भी साहित्यिक व्यंग्य और मीम संस्कृति के बीच एक मूलभूत अंतर बना रहता है-

- साहित्यिक व्यंग्य किसी रचनाकार की दीर्घ वैचारिक साधना और सामाजिक दृष्टि का परिणाम होता है, जबकि मीम संस्कृति में सामूहिक सृजन और तात्कालिक प्रतिक्रिया की प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।
- परंपरागत व्यंग्य पाठक को चिंतन और आत्ममंथन की ओर ले जाता है, जबकि मीम तत्काल प्रतिक्रिया और त्वरित संप्रेषण पर आधारित होते हैं।
- साहित्यिक व्यंग्य में भाषा, प्रतीक, रूपक, व्यंजना और कथात्मक संरचना का विशेष महत्व होता है, जबकि मीम दृश्य संकेतों, लोकप्रिय सांस्कृतिक संदर्भों और संक्षिप्त अभिव्यक्ति पर आधारित होते हैं।

- साहित्यिक व्यंग्य समय के साथ सांस्कृतिक दस्तावेज़ का रूप ग्रहण कर लेता है, जबकि अधिकांश मीम अपने समय और संदर्भों तक सीमित रहते हैं।
- साहित्यिक व्यंग्य में लेखक और पाठक के बीच बौद्धिक संवाद स्थापित होता है, जबकि मीम संस्कृति में उपभोक्ता स्वयं भी निर्माता बन सकता है। इस प्रकार मीम संस्कृति व्यंग्य के लोकतंत्रीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

इसके बावजूद यह स्वीकार करना होगा कि मीम संस्कृति ने व्यंग्य को नई पीढ़ी तक पहुँचाने और उसे समकालीन सामाजिक संवाद का हिस्सा बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परसाई से मीम तक की यात्रा व्यंग्य की मूल चेतना में परिवर्तन की नहीं, बल्कि उसके माध्यम, भाषा और अभिव्यक्ति-शैली में आए रूपांतरण की यात्रा है। व्यंग्य का लक्ष्य आज भी वही है, समाज को उसकी विसंगतियों से परिचित कराना किन्तु दृश्य-संस्कृति के इस युग में उसकी अभिव्यक्ति ने एक नया रूप धारण कर लिया है। यही रूपांतरण हिंदी व्यंग्य की जीवंतता और उसकी निरंतर प्रासंगिकता का प्रमाण है।

मीम संस्कृति : प्रतिरोध, राजनीति और जनभागीदारी

समकालीन डिजिटल संस्कृति में मीम केवल मनोरंजन का साधन नहीं रह गया है, बल्कि वह प्रतिरोध, राजनीतिक अभिव्यक्ति और जनभागीदारी का प्रभावशाली माध्यम बनकर उभरा है। सोशल मीडिया के विस्तार ने आम नागरिक को अभिव्यक्ति का ऐसा मंच प्रदान किया है जहाँ वह सत्ता, व्यवस्था और सामाजिक संरचनाओं पर अपनी प्रतिक्रिया तत्काल व्यक्त कर सकता है। इस दृष्टि से मीम संस्कृति ने व्यंग्य को अभिजनवादी दायरे से निकालकर जनसामान्य के बीच स्थापित किया है।

प्रतिरोध की संस्कृति के संदर्भ में मीमों की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डिजिटल युग में वे असहमति और विरोध की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गए हैं। सामाजिक अन्याय, प्रशासनिक विफलताओं, आर्थिक संकटों तथा सांस्कृतिक विसंगतियों के प्रति जनभावनाएँ अनेक बार मीमों के माध्यम से व्यक्त होती हैं। डिजिटल एक्टिविज़्म पर किए गए अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया आधारित व्यंग्यात्मक सामग्री नागरिकों के बीच वैकल्पिक विमर्श का निर्माण करती है तथा मुख्यधारा के राजनीतिक आख्यानों को चुनौती देने की क्षमता रखती है। इस प्रकार यह कहना उचित ही होगा कि मीम समकालीन समाज में 'डिजिटल प्रतिरोध' की नई भाषा के रूप में उभरे हैं।

राजनीतिक क्षेत्र में मीमों का प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है। ऑक्सफोर्ड इंटरनेट इंस्टीट्यूट तथा विभिन्न डिजिटल लोकतंत्र अध्ययनों में यह संकेत किया गया है कि सोशल मीडिया राजनीतिक संचार का प्रमुख मंच बन चुका है, जहाँ दृश्य-आधारित सामग्री जनमत को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ डेवलपिंग सोसाइटीज़ के युवा अध्ययनों से भी यह तथ्य सामने आया है कि भारत का युवा वर्ग राजनीतिक जानकारी प्राप्त करने और राजनीतिक घटनाओं पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए सोशल मीडिया का व्यापक उपयोग करता है। ऐसे परिदृश्य में मीम राजनीति की जटिल भाषा को सरल और जनसुलभ बनाते हैं तथा नागरिकों को राजनीतिक संवाद से जोड़ते हैं।

जनभागीदारी की दृष्टि से मीम संस्कृति ने संचार के स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। पारंपरिक मीडिया में सूचना का प्रवाह प्रायः एकतरफा होता था, जबकि डिजिटल माध्यमों ने प्रत्येक व्यक्ति को संभावित रचनाकार बना दिया है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था यूनेस्को तथा विभिन्न मीडिया साक्षरता अध्ययनों ने इस बात पर बल दिया है कि डिजिटल मंचों ने नागरिक सहभागिता के नए अवसर निर्मित किए हैं, जहाँ उपयोगकर्ता केवल सूचना ग्रहण नहीं करते, बल्कि उसके निर्माण और प्रसार में भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं। मीम संस्कृति इसी सहभागी संचार)Participatory Communication) का एक जीवंत उदाहरण है।

युवा वर्ग में मीम संस्कृति की लोकप्रियता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वैश्विक डिजिटल व्यवहार से संबंधित अनेक अध्ययनों से संकेत मिलता है कि नई पीढ़ी दृश्य आधारित और संक्षिप्त संचार माध्यमों को अधिक प्रभावी मानती है। इसी कारण मीम आज केवल हास्य का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर संवाद स्थापित करने का माध्यम भी बन चुके हैं। वे युवाओं को सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा बनने के लिए प्रेरित करते हैं तथा उन्हें अपनी बात व्यक्त करने का सहज मंच प्रदान करते हैं। सांस्कृतिक अध्ययन के विद्वानों का मत है कि डिजिटल युग में मीम केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक अर्थों, जनभावनाओं और सामूहिक स्मृतियों के निर्माण की प्रक्रिया का सक्रिय अंग बन चुके हैं। वे अपने समय की चिंताओं, आकांक्षाओं, असंतोष और प्रतिरोध को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। इसलिए मीम संस्कृति को केवल हास्य या मनोरंजन की दृष्टि से नहीं, बल्कि समकालीन लोकतांत्रिक चेतना, राजनीतिक संवाद और जनभागीदारी के एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक माध्यम के रूप में समझा जाना चाहिए। भारतीय संदर्भ में मीम संस्कृति ने डिजिटल सार्वजनिक क्षेत्र (Digital Public Sphere) के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रतियोगी परीक्षाओं में अनियमितताओं, बेरोजगारी, महँगाई, शिक्षा-व्यवस्था,

तकनीकी परिवर्तनों तथा सामाजिक असमानताओं जैसे विषयों पर निर्मित मीम व्यापक जनध्यान आकर्षित करते हैं। अनेक बार वे उन मुद्दों को भी सार्वजनिक विमर्श का विषय बना देते हैं जिन्हें मुख्यधारा का मीडिया अपेक्षित महत्व नहीं देता। इस प्रकार मीम केवल प्रतिक्रिया का माध्यम नहीं, बल्कि वैकल्पिक जनमत और सामाजिक चेतना के निर्माण का उपकरण भी बन जाते हैं।

मीम संस्कृति की सीमाएँ और चुनौतियाँ

क) मीम संस्कृति की सीमाएँ : प्रत्येक सांस्कृतिक अभिव्यक्ति अपने भीतर संभावनाओं और सीमाओं का द्वंद्व समेटे रहती है। मीम संस्कृति भी इसका अपवाद नहीं है। यद्यपि उसने डिजिटल युग में व्यंग्य, संवाद और जनसहभागिता को नई ऊर्जा प्रदान की है, तथापि उसकी संरचना, प्रस्तुति और संप्रेषण की प्रकृति कुछ ऐसी सीमाएँ भी निर्मित करती है जो उसके प्रभाव को आंशिक रूप से नियंत्रित करती हैं। दृश्य संकेतों और संक्षिप्त अभिव्यक्ति पर आधारित होने के कारण अनेक बार वह जटिल सामाजिक यथार्थ, वैचारिक बहसों तथा सांस्कृतिक संदर्भों की गहराई को समुचित रूप से व्यक्त नहीं कर पाती। फलतः उसकी लोकप्रियता के समानांतर कुछ ऐसी अंतर्निहित सीमाएँ भी उभरती हैं, जिनका आलोचनात्मक परीक्षण आवश्यक है।

i. **संक्षिप्तता की सीमा :** मीम संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता उसकी संक्षिप्तता है, किंतु यही उसकी सीमा भी है। जटिल सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रश्नों को कुछ शब्दों और एक दृश्य के माध्यम से प्रस्तुत करने के कारण विषय का व्यापक परिप्रेक्ष्य अनेक बार सामने नहीं आ पाता। संचार सिद्धांतकार मार्शल मैकलुहान का मत है कि माध्यम स्वयं संदेश के स्वरूप को प्रभावित करता है। इस दृष्टि से मीम का संक्षिप्त माध्यम विचारों की गहराई को सीमित कर सकता है।

ii. **क्षणभंगुरता :** अधिकांश मीम समसामयिक घटनाओं और तत्कालीन परिस्थितियों से जुड़े होते हैं। घटना के समाप्त होते ही उनका प्रभाव भी कम होने लगता है। समाजशास्त्री जिग्मुंट बाउमन ने आधुनिक समय को 'तरल आधुनिकता')Liquid Modernity) का युग कहा है, जहाँ स्थायित्व की अपेक्षा क्षणिकता अधिक प्रभावी है। मीम संस्कृति इसी क्षणभंगुर प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करती है।

iii. **साहित्यिक गहनता का अभाव :** परंपरागत हिंदी व्यंग्य साहित्य में भाषा, विचार और सामाजिक विश्लेषण का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। हरिशंकर परसाई का मानना था कि व्यंग्य केवल हँसाने का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना को जागृत करने का माध्यम है। मीम संस्कृति में यह चेतना उपस्थित तो रहती है, किंतु उसकी अभिव्यक्ति प्रायः संक्षिप्त और तात्कालिक होती है, जिसके कारण साहित्यिक गहनता अपेक्षाकृत कम दिखाई देती है।

iv. **संदर्भ-निर्भरता :** मीमों का अर्थ अक्सर किसी विशेष सामाजिक, राजनीतिक या सांस्कृतिक संदर्भ पर आधारित होता है। यदि दर्शक उस संदर्भ से परिचित न हो, तो मीम का आशय अस्पष्ट रह सकता है। परिणामस्वरूप उसकी संप्रेषणीयता सीमित हो जाती है।

v. **स्थायी सांस्कृतिक मूल्य का प्रश्न :** साहित्यिक कृतियाँ समय के साथ सांस्कृतिक धरोहर का रूप ग्रहण कर लेती हैं, जबकि अधिकांश मीम तत्कालीन परिस्थितियों तक सीमित रहते हैं। इसलिए यह प्रश्न विचारणीय है कि क्या मीम भविष्य में सांस्कृतिक स्मृति के स्थायी स्रोत बन सकेंगे।

ख) मीम संस्कृति की चुनौतियाँ : सीमाओं से आगे बढ़कर मीम संस्कृति के समक्ष कुछ ऐसी चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं, जो केवल उसकी अभिव्यक्ति-पद्धति से नहीं, बल्कि व्यापक डिजिटल परिवेश, सामाजिक संरचनाओं और तकनीकी तंत्रों से जुड़ी हुई हैं। डिजिटल माध्यमों की तीव्रता और सर्वव्यापकता ने जहाँ मीमों को अभूतपूर्व पहुँच प्रदान की है, वहीं उनके माध्यम से प्रसारित संदेशों की विश्वसनीयता, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व को लेकर अनेक प्रश्न भी उत्पन्न हुए हैं। भ्रामक सूचनाओं का प्रसार, ट्रोल संस्कृति, एल्गोरिथ्मिक नियंत्रण, व्यावसायिक हस्तक्षेप तथा वैचारिक ध्रुवीकरण जैसी प्रवृत्तियाँ मीम संस्कृति के समक्ष गंभीर चुनौतियों के रूप में उपस्थित हैं। अतः इसकी सामाजिक भूमिका का सम्यक् मूल्यांकन तभी संभव है, जब इसकी उपलब्धियों के साथ-साथ इन चुनौतियों पर भी गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए।

i. **संदर्भहीनता (Decontextualization) :** सांस्कृतिक सिद्धांतकार स्टुअर्ट हॉल के अनुसार किसी भी संदेश का अर्थ उसके सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से निर्मित होता है। जब किसी कथन, चित्र या घटना को उसके मूल संदर्भ से अलग कर मीम के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तब अर्थ-विकृति की संभावना बढ़ जाती है।

ii. **भ्रामक सूचना का प्रसार :** डिजिटल युग में गलत सूचना (Misinformation) और दुष्प्रचार (Disinformation) गंभीर समस्या बन चुके हैं। यूनेस्को की रिपोर्ट Journalism, Fake News and Disinformation (2018) में डिजिटल माध्यमों पर प्रसारित भ्रामक सूचनाओं को लोकतांत्रिक समाज के लिए चुनौती माना गया है। मीमों के माध्यम से भी कई बार अपुष्ट सूचनाएँ तीव्र गति से फैल जाती हैं।

iii. **व्यावसायीकरण :** मीम संस्कृति का एक बड़ा हिस्सा अब बाजार और प्रचार-तंत्र से जुड़ गया है। विज्ञापन एजेंसियाँ, कॉर्पोरेट संस्थाएँ तथा राजनीतिक संगठन जनमत को प्रभावित करने के लिए मीमों का उपयोग कर रहे हैं। इस कारण मीमों की स्वतंत्र और स्वाभाविक अभिव्यक्ति पर प्रश्नचिह्न लगने लगता है।

iv. **एल्गोरिथ्मिक पक्षपात :** डिजिटल मीडिया शोधकर्ता एली पैराइज़र ने 'फिल्टर बबल' की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए बताया है कि सोशल मीडिया एल्गोरिथ्म उपयोगकर्ताओं को उन्हीं विचारों और सामग्रियों तक सीमित कर देते हैं जो उनकी पूर्व मान्यताओं से मेल खाती हैं। इससे वैकल्पिक दृष्टिकोणों तक पहुँच सीमित हो सकती है और वैचारिक ध्रुवीकरण बढ़ सकता है।

v. **ट्रोल संस्कृति और डिजिटल आक्रामकता :** व्यंग्य और आलोचना लोकतांत्रिक समाज के लिए आवश्यक हैं, किंतु कई बार मीम संस्कृति ट्रोलिंग, व्यक्तिगत आक्षेप और घृणात्मक अभिव्यक्तियों का माध्यम बन जाती है। मीडिया अध्येता व्हिटनी फिलिप्स ने ट्रोल संस्कृति को डिजिटल सार्वजनिक जीवन के लिए गंभीर चुनौती माना है। ऐसी स्थिति में व्यंग्य की रचनात्मक शक्ति कमजोर पड़ सकती है।

vi. **नैतिक उत्तरदायित्व का संकट :** मीमों के निर्माण और प्रसार में प्रायः किसी प्रकार का संपादकीय नियंत्रण नहीं होता। परिणामस्वरूप जाति, धर्म, लिंग और सामाजिक समूहों से संबंधित संवेदनशील विषयों पर असंवेदनशील अथवा अपमानजनक सामग्री प्रसारित होने की संभावना बनी रहती है। इसलिए डिजिटल अभिव्यक्ति के साथ नैतिक उत्तरदायित्व भी आवश्यक है।

मीम संस्कृति समकालीन समाज की एक सशक्त सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है, किंतु उसकी सीमाओं और चुनौतियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आवश्यक है कि मीमों को केवल मनोरंजन की वस्तु न मानकर सामाजिक उत्तरदायित्व, मीडिया साक्षरता और लोकतांत्रिक संवाद के व्यापक संदर्भ में समझा जाए। तभी यह माध्यम स्वस्थ जनविमर्श और रचनात्मक सामाजिक चेतना के निर्माण में सार्थक भूमिका निभा सकेगा।

निष्कर्ष

दृश्य-संस्कृति और डिजिटल संचार के वर्तमान युग में अभिव्यक्ति के स्वरूपों में जो व्यापक परिवर्तन दिखाई दे रहा है, वह केवल तकनीकी परिवर्तन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना के पुनर्गठन की प्रक्रिया भी है। हिंदी व्यंग्य की दीर्घ परंपरा ने सदैव समाज के अंतर्विरोधों, सत्ता की विसंगतियों, मानवीय दुर्बलताओं और समय की विडंबनाओं को आलोचनात्मक दृष्टि से देखने की प्रेरणा दी है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल तथा अन्य व्यंग्यकारों की रचनाओं में जो प्रश्नाकुलता, प्रतिरोधधर्मिता और सामाजिक सजगता दिखाई देती है, वही चेतना आज डिजिटल मंचों पर नए रूपों में सक्रिय दिखाई देती है। इस दृष्टि से मीम संस्कृति को परंपरागत व्यंग्य से पृथक या विरोधी रूप में नहीं, बल्कि उसकी परिवर्तित और समकालीन अभिव्यक्ति के रूप में समझा जाना चाहिए।
वस्तुतः परसाई से मीम तक की यात्रा माध्यमों के परिवर्तन की यात्रा है, न कि व्यंग्य की मूल आत्मा के परिवर्तन की। जहाँ साहित्यिक व्यंग्य शब्दों, प्रतीकों, रूपकों और कथात्मक संरचनाओं के माध्यम से सामाजिक यथार्थ का उद्घाटन करता था, वहीं मीम दृश्य संकेतों, लोकप्रिय सांस्कृतिक प्रतीकों और संक्षिप्त अभिव्यक्तियों के माध्यम से उसी आलोचनात्मक कार्य को संपन्न करने का प्रयास करते हैं। दोनों के स्वरूप भिन्न हो सकते हैं, किंतु दोनों की केंद्रीय चिंता समाज को उसके समय के सत्य से परिचित कराना ही है। यही कारण है कि डिजिटल युग में भी व्यंग्य की प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई है, बल्कि उसने अभिव्यक्ति के नए आयाम प्राप्त किए हैं। साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि मीम संस्कृति केवल हास्य और मनोरंजन की संस्कृति नहीं है। वह समकालीन समाज की मानसिकताओं, आकांक्षाओं, असंतोषों, प्रतिरोधों और जनभावनाओं का एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक दस्तावेज़ बनती जा रही है। अनेक बार मीम उन सामाजिक और राजनीतिक प्रश्नों को भी सार्वजनिक विमर्श के केंद्र में ले आते हैं, जिन्हें औपचारिक मीडिया या संस्थागत विमर्श पर्याप्त स्थान नहीं दे पाते। इस प्रकार मीम संस्कृति ने लोकतांत्रिक संवाद की प्रक्रिया को अधिक सहभागी, त्वरित और जनोन्मुख बनाया है। यह डिजिटल सार्वजनिक क्षेत्र में नागरिकों की सक्रिय उपस्थिति और अभिव्यक्ति की नई संभावनाओं का संकेत भी है।

भविष्य की दृष्टि से देखें तो कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), संवर्धित वास्तविकता (Augmented Reality), आभासी वास्तविकता (Virtual Reality) तथा अन्य उभरती डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ अभिव्यक्ति के स्वरूपों को और अधिक परिवर्तित करेंगी। संभव है कि आने वाले समय में मीम केवल स्थिर चित्रों तक सीमित न रहकर बहुआयामी, अंतःक्रियात्मक (Interactive) और कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा निर्मित सांस्कृतिक पाठों का रूप ग्रहण कर लें। ऐसी स्थिति में व्यंग्य की भाषा, संरचना और संप्रेषण के नए प्रतिमान विकसित होंगे। हिंदी भाषा और साहित्य के लिए यह एक नई चुनौती भी होगी और एक नया अवसर भी। आवश्यकता इस बात की होगी कि हिंदी आलोचना और साहित्यिक अध्ययन इन नवोन्मेषी अभिव्यक्तियों को गंभीर अध्ययन का विषय बनाए तथा उन्हें सांस्कृतिक विमर्श की मुख्यधारा में स्थान दे।

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित जनरेटिव प्रणालियाँ, संवर्धित वास्तविकता (Augmented Reality), आभासी वास्तविकता (Virtual Reality) तथा मेटावर्स जैसी तकनीकें व्यंग्य की अभिव्यक्ति को और अधिक बहुआयामी बना सकती हैं। संभव है कि आने वाले समय में उपयोगकर्ता केवल मीम को देखें ही नहीं, बल्कि उसके साथ अंतःक्रिया भी करें। कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा निर्मित व्यंग्यात्मक दृश्य-पाठ, स्वचालित मीम निर्माण तथा बहुभाषिक डिजिटल व्यंग्य हिंदी अभिव्यक्ति को वैश्विक स्तर पर नई पहचान प्रदान कर सकते हैं। इसलिए भविष्य का हिंदी व्यंग्य केवल साहित्यिक या दृश्यात्मक न होकर एक अंतःक्रियात्मक सांस्कृतिक अनुभव का रूप भी ग्रहण कर सकता है। अंततः इतना तो कहा ही जा सकता है कि हिंदी व्यंग्य की परंपरा अपनी मूल चेतना में निरंतर जीवित और गतिशील है। माध्यम बदलते रहेंगे, तकनीकें विकसित होती रहेंगी और अभिव्यक्ति के रूप निरंतर रूपांतरित होते रहेंगे, किंतु समाज को प्रश्नांकित करने, सत्ता से संवाद स्थापित करने और मानवीय विवेक को जागृत करने की व्यंग्य की मूल भूमिका बनी रहेगी। परसाई की लेखनी से लेकर डिजिटल स्क्रीन पर उभरते मीम तक व्यंग्य की यह यात्रा भारतीय समाज की आलोचनात्मक चेतना, लोकतांत्रिक संवेदनशीलता और सांस्कृतिक जीवंतता की सतत यात्रा है। भविष्य में भी यही चेतना हिंदी व्यंग्य को नए रूपों, नए माध्यमों और नई पीढ़ियों के बीच प्रासंगिक बनाए रखेगी तथा उसे सामाजिक आत्ममंथन और रचनात्मक परिवर्तन की एक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में स्थापित करती रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. परसाई, हरिशंकर. *सदाचार का ताबीज.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
2. परसाई, हरिशंकर. *विकलांग श्रद्धा का दौर.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
3. जोशी, शरद. *प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाएँ.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
4. शुक्ल, श्रीलाल. *राग दरबारी.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
5. त्यागी, रवीन्द्रनाथ. *प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाएँ.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन
6. चतुर्वेदी, ज्ञान. *बारामासी.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
7. सूर्यबाला. *प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाएँ.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन
8. नवल, हरीश. *हिंदी व्यंग्य : परंपरा और विकास.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2010।
9. प्रेम जनमेजय (सं.). *हिंदी व्यंग्य का समकालीन परिदृश्य.* नई दिल्ली: किताबघर प्रकाशन, 2015।
10. मिश्र, विद्यानिवास. *साहित्य का प्रयोजन.* नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ
11. पचौरी, सुधीश. *उत्तर आधुनिक मीडिया विमर्श.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2006।
12. द्विवेदी, हजारीप्रसाद. *साहित्य का मर्म.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
13. Berger, John. *Ways of Seeing*. London: Penguin Books, 1972.
14. Dawkins, Richard. *The Selfish Gene*. Oxford: Oxford University Press, 1976.
15. Hall, Stuart. *Representation: Cultural Representations and Signifying Practices*. London: Sage Publications, 1997.
16. Jenkins, Henry. *Convergence Culture: Where Old and New Media Collide*. New York: New York University Press, 2006.
17. McLuhan, Marshall. *Understanding Media: The Extensions of Man*. New York: McGraw-Hill, 1964.
18. Mirzoeff, Nicholas. *An Introduction to Visual Culture*. London: Routledge, 1999.
19. Pariser, Eli. *The Filter Bubble: What the Internet Is Hiding from You*. New York: Penguin Press, 2011.
20. Phillips, Whitney. *This Is Why We Can't Have Nice Things: Mapping the Relationship between Online Trolling and Mainstream Culture*. Cambridge, MA: MIT Press, 2015.
21. Shifman, Limor. *Memes in Digital Culture*. Cambridge, MA: MIT Press, 2014.

22. Bauman, Zygmunt. *Liquid Modernity*. Cambridge: Polity Press, 2000.
23. UNESCO. *Journalism, 'Fake News' and Disinformation: Handbook for Journalism Education and Training*. Paris: UNESCO, 2018.
24. UNESCO. *Media and Information Literacy Curriculum for Educators and Learners*. Paris: UNESCO, 2021.
25. Oxford Internet Institute. *Computational Propaganda and Political Communication Reports*. Oxford: University of Oxford.
26. Centre for the Study of Developing Societies (CSDS). *Youth and Politics in India: Survey Reports*. New Delhi: CSDS.